सूखी स्याही

लघुकथा संग्रह

हेमलता मिश्र 'मानवी'

अन्तरा-शब्दशक्ति
प्रकाशन

सूखी स्याही

लघुकथा संग्रह

हेमलता मिश्र 'मानवी'

अन्तरा शब्दशक्ति प्रकाशन
वारासिवनी, मध्यप्रदेश

ISBN - " 978-93-5372-075-9"

अन्तरा-शब्दशक्ति प्रकाशन

संपादक- प्रीति समकित सुराना

तकनीकी संपादक - संदीप कुमार सोनी

मुख्यकार्यालय- १५ नेहरू चौक, वारासिवनी, जिला बालाघाट (म.प्र.) ४८१३३१

दूरभाष- (कार्या.) ०७६३३-२५३१५६

मोबाईल- ६४२४७६५२५६

अणुडाक - antrashabdshakti@gmail.com

अंतरताना - www.antrashabdshakti.com

प्रथम संस्करण - २०१६, **हेमलता मिश्र 'मानवी'**

आवरण चित्र - **संदीप सोनी, वारासिवनी**

मूल्य - ६०.०० रूपये

मूद्रक- **शैलू कम्प्यूटर्स, वारासिवनी**

SUKHI SYAHI BY HEMLATA MISHR"MANAVI"

वैधानिक चेतावनीः- इस पुस्तक का सर्वाधिकार सुरक्षित है। लेखक की लिखित अनुमति के बिना इसके किसी भी अंश को फोटोकॉपी एवं रिकार्डिंग सहित इलेक्ट्रोनिक अथवा मशीनी किसी भी माध्यम में अथवा संग्रहण और पुनर्प्रयोग की प्रणाली द्वारा किसी भी रूप में पुनरूत्पादित अथवा संचारित प्रसारित नहीं किया जा सकता है। प्रस्तुत पुस्तक की समस्त रचनाएँ लेखक द्वारा अन्तरा-शब्दशक्ति प्रकाशन को प्रेषित की गई है। अतः प्रत्येक रचना की मौलिकता के किसी भी दावे हेतु लेखक जिम्मेदार है। प्रस्तुत पुस्तक के घटनाक्रम पात्र, भाषाशैली एवं स्थान सभी लेखक की कल्पना है। किसी भी प्रकार के वाद-विवाद के लिए प्रकाशक का सहमत होना अनिवार्य नहीं है।

मेरी बात

आज का दौर लघुकथाओं का दौर है। संक्षिप्त में विस्तार और सीमित में असीमित का दर्शन लघुकथा की विशेषता है। आज की व्यस्तता में साहित्य की दुनिया भी अनसुनी रह जाती है। कम से कम लघुकथा का छोटा सा स्वरूप सुधिजनों को साहित्य और संस्कृ ति से जोड़े रखता है बस यही सोचकर आपके संमुख लघुकथा संग्रह 'सूखी स्याही' प्रस्तुत कर रही हूँ। अपनी ही रचनाओं पर कुछ भी कहने की अधिकारी मैं नहीं हूँ, परीक्षा तो आप पाठकों की संवेदनशीलता और साहित्य प्रगल्भता की है कि आप मेरी रचनाधर्मिता और मेरी लघुकथाओं में क्या और कितना खोज पाते हैं और मुझे अपने स्नेहाशीष से नवाजते हैं या सकारात्मक आलोचनाओं से- मुझे सब स्वीकार्य है।

लघुकथा साहित्यिक विधा है भी या नहीं- आज भी विवाद का विषय है। लेकिन मैं शिद्दत से लघुकथा की हिमायती हूँ

सच कहें तो जिंदगी के बारे में हम सबकी समझ बस इतनी ही होती है जितनी कश्ती में बैठे एक मल्लाह की अथाह समुंदर के बारे में या डोर से बंधी पतंग की विशाल विस्तीर्ण आकाश के बारे में- और लघुकथा इसी अनभिज्ञता में भिज्ञता का साकार रूप होती हैं।

मेरी रचनाओं को आप पढेंगे एवं अपनी अनमोल प्रतिक्रियाओं से अवगत कराएंगे इसी आशा के साथ

शेष फिर कभी।

हेमलता मिश्र 'मानवी' नागपुर।

०७१२६२२३२२९३

०९३२५८५५२६३

अनुक्रमणिका

1.	एक झोंका	7
2.	आशीष	7
3.	गये थे हरिभजन को ओटन लगे.. कपास	8-9
4.	बदलाव	9
5.	दर्पण	10-11
6.	इच्छामृत्यु मोक्ष	11
7.	सर्विसिंग	12-13
8.	अनाथ	13-14
9.	एक गिलास पानी	15
10.	अछोर प्रेम	16
11.	बिना शीर्षक का वृद्धाश्रम	17
12.	पैसा बोलता है	18-19
13.	दीप की कहानी	20-21
14.	मुस्कान का धर्म	21-22
15.	आहत आत्मा	23-24
16.	गलियारा	24-25
17.	अधूरा क्रांति दिवस	25-26
18.	माँ..एक तस्वीर सी	26-27
19.	कुंती	27-29
20.	अनेकता में एकता	29-30
21.	फरिश्ता	30
22.	खानदानी	31-32
23.	अनूठी नारी	32
24.	खुशी का एक पल	33-34
25.	ढोंगी	34
26.	शोषण	35

27.	कल आज और कल	36
28.	बेटी बचाओ बेटी पढ़ाओ	37-38
29.	गोल्ड मेडल	38
30.	गूंगी ममता	39
31.	पतित–पावनी गंगा	40
32.	किसका सच?	41
33.	पिंजरा	42
34.	रूह का सफर	43-44
35.	रिटायरमेंट	44
36.	उसकी ईदी	45
37.	आज का कान्हा	46
38.	रिश्तों की सडांध	46
39.	प्रसव पीड़ा	47
40.	दुकान जलने की खुशी	48
41.	सूखी स्याही	48

एक झोंका

हां हां बोल ले जीजी जितना बोलना है। तू तो माँ है- दादी है ना। मैं तो ठहरी बंझोटी विधवा मुझे क्या हक है तेरे बेटे तेरे पोते को कुछ कहने का।

नन्हा सा बालक मधुर गौर से दादी माँ और मौसी दादी की बातें सुन रहा था- एकाएक दादी माँ से कहा दादी मौसी ने मुझे नहीं मारा मैं मिट्टी में खेल रहा था और गिर गया।

अबोध बालक की संवेदना मौसीदादी के जख्मों को सहला गई। तत्काल उसे छाती से लगा लिया और ६२ वर्ष की उम्र की वह वृद्धा ४२ वर्षों के कटु वैधव्य और रिश्ते विहीन, संवेदनहीन जीवन की समस्त कटुता के पार नन्हे मधुर के छोटे से झूठ के रूप में अपनी गूंगी ममता का प्रतिदान पाकर फूल सी हल्की हो गई और चल दी अपने कान्हा जी को शयन करवाने। चालीस सालों में पहली बार उस भावहीन चेहरे की कठोरता के पीछे से झांकती मीठी सी संतुष्टि उस परिवार की भी संतुष्टि बन गई।

आशीष

पूजन के पश्चात थरथराते हाथों से पिता ने बेटे को टीका लगाया। सिंदूरी टीका टेढ़ा हो गया.. माँ ने प्रयास किया वह दूसरी ओर और थोड़ा टेढ़ा हो गया.. बहू ने पानी से माथा रगड़ पोंछकर सुघड़ता से माथे के बीचों-बीच नया टीका लगा दिया।

ये थे हरिभजन को ओटन लगे... कपास

'कहां चले सबेरे सबेरे।'- कहते कहते लता ने बिस्तर पर से ही प्रश्न दाग दिया।- आंख खुलते ही देखा पतिदेव सज सँवर कर सफेद झक कपडे पहने तैयार खड़े हैं कहीं जाने के लिए।

अरे भागवान चुनाव की तिथियां घोषित हो गई हैं। अभी हाथपैर मारने का समय है। सोचता हूँ आंबेडकर साहब की जयंती पर जरा एक चक्कर दलित बस्ती का लगा आऊं। कम से कम जनता में संदेश तो अच्छा जाएगा।

लता का दिल गुस्से और वितृष्णा से भर गया। छः वर्ष हो गए विवाह को। अब तक संतान नहीं हुई थी दोनों ही भाग्य भरोसे बैठे थे। आज लता ने सोचा कि कुछ भी हो डॉ. के यहां जरूर ले जाएगी शुक्ला जी को। मगर ये मरा चुनाव फिर आ धमका।

सभा में छुटभैये कार्यकर्ताओं ने अच्छी खासी भीड़ जमा कर ली थी। नेताजी ने अस्पृश्यता पर और जातिवाद पर सवाल उठाते हुए सामाजिक समानता पर धाराप्रवाह भाषण दिया। बडा ही इंप्रेसिव रहा सब कुछ।

इतने में बस्ती के मुखिया ने एक समस्या रख दी। साहब ई दुई महिना की मुनिया। मैया तो जन्म देतेई मर गई अउर कल बाप भी एक्सीडेंट में भगवान को प्यारा हो गया। अब अनाथ बच्ची को कौन पाले।

बस नेताजी को राह मिल गई जनता को इंप्रेस करके पार्टी से टिकट पाने की। तपाक से घोषणा कर दी- हम पालेंगे इस गुड़िया को- गोद लेंगे हम इस को।

सभा में नेताजी की जय-जयकार होने लगी।

सभा में उपस्थित लता का दिल बल्लियों उछल गया। पति के षड़यंत्री दिमाग को जानती थी लेकिन बच्चे के लिए तरसती ममता

ने आगा पीछा कुछ नहीं सोचा। झट से बच्ची को गोद में ले लिया और आभारी निगाहों से नेताजी को देखने लगी। और इधर नेताजी को काटो तो खून नहीं। पब्लिसिटी के लिए उठायी गई कसम तो गले की फांस बन गई। वे जानते थे कि स्वाभाविक रूप से सच्ची- जातिभेद पर भरोसा न करनेवाली और विचारों में स्वतंत्र लता को अब परावृत्त करना कठिन ही नहीं नामुमकिन है- टिकिट मिले या ना मिले बच्ची को तो गोद लेना ही होगा। स्टेज पर चुपचाप खड़े नेताजी जान गये थे कि चुनाव में गले पड़ा यह दायित्व अब तो जिंदगी भर निभाना ही है- कि गए थे हरिभजन को ओटन लगे कपास।

बदलाव

दस वर्षीय रीनी से डैडी ने कहा- 'बेटा ताऊजी को प्रणाम करो'। बड़े नखरे से रीनी ने ताऊजी के पास जाकर उन्हें प्रणाम किया। ताऊजी ने पीठ पर हाथ रखकर आशीर्वाद दिया। रीनी एकदम छिटक कर अलग हो गई- बोली 'ताऊजी बॅड मॅनर्स- गर्ल्स की पीठ पर हाथ नहीं रखते।' ताऊजी सकते में खड़े रह गये। सोचते रह गए मानवीय सांस्कृतिक व्यवहार की परिभाषाओं में आए बदलाव के बारे में- आशीर्वाद के अर्थ के बारे में और आज की दस वर्षीय सोच के बारे में।

दर्पण

अब रहने भी दो रमा। कब तक यूं दर्पण में अपने आप को निहारती रहोगी। भई ज्यादा देर तक आईना देखने से तुम खूबसूरत तो नहीं हो जाओगी। जो हो वही रहोगी यार चलो अब जल्दी चलो नहीं तो पार्टी में यार दोस्त तुम्हारे रंग के साथ साथ समय पर न पहुंचने को लेकर भी कमेंट करेंगे और मैं बेचारा व्यर्थ ही कल्लो बीबी के साथ साथ फूहड बीबी का पति भी कहला जाऊंगा। इतना कहते कहते रमा के धुआं धुंआ चेहरे पर रमण की निगाह पड़ी। एक क्षण के लिए पत्नी के प्रति संवेदना जाग्रत हुई मगर अगले ही पल पत्नी के काले रंग के प्रति मन में खौलते अनचीन्हे आक्रोश ने संवेदनशीलता का गला घोंट दिया और मन ही मन बुदबुदाता रमण आंगन से कार बाहर निकालने लगा।

ऐसा नहीं कि विवाह के पहले रमण को रमा के रंगरूप की जानकारी नहीं थी। लेकिन दुर्भाग्य पूर्ण बेरोजगारी के दौर में छोटी सी कंपनी के मालिक की इकलौती बेटी का रिश्ता रमण को अंधेरे में जुगनू सा लगा और उसने शादी के लिए हां कर दी।

विवाह की खुमारी में कुछ समय अच्छा बीत गया। लेकिन धीरे धीरे रमण को रमा का काला रंग और अनगढ़ व्यक्तित्व सालने लगा और उसीकी प्रतिक्रिया थी दर्पण के सामने रमा के प्रति रमण का रोष।

सांवली सलोनी रमा मूर्ख नहीं थी। उसने लाख लाख दुहाई देकर मां पापा को रोका था। वह जानती थी कि गंधर्व लोक के राजकुमार जैसे खूबसूरत सुदर्शन रमण और सांवरी रमा के बाहरी रूप रंग में जमीन आसमान का फर्क था। यह विवाह बेमेल सा है। लेकिन मां पापा के सामने उसकी एक न चली- और दर्पण का सच रोज उन्हें रुलाता।

काश दर्पण मन की सच्ची सूरत दिखाता तो रमा दिखा देती रमण को अपने दिल की सच्चाईयां। दिखा देती रमा कि उसने नहीं चाहा था रमण को यह तिल तिल घेरता अंधेरा डसे। वह आज भी मुक्त कर सकती है रमण को उजालों की राहों पर चलने के लिए।

लेकिन उसके बाद उसका अपना जीवन- परित्यक्ता का तमगा और घुटन- नहीं नहीं झुरझुरी आ गई उसे।

दर्पण की सच्चाई भले ही डराती रहे- रमा को चलना होगा उसके साथ- जब तक चल सके।

इच्छामृत्यु मोक्ष

नहीं नहीं। अब और नहीं। यह असहनीय दर्द- डॉ मुझे मुक्ति दे दो। वैसे भी हर पल मर रहा हूँ इस दर्द के साथ।

भीष्म पितामह ने भी तो इच्छामृत्यु का वरण किया था। नहीं चाहिए मुझे मोक्ष- मौत चाहिए मौत।

वरदान के प्रलाप ने डॉ को भी हिला दिया। कैंसर के असहनीय दर्द से जूझता वरदान अकाल मृत्यु या आत्महत्या आदि के बारे में सदियों के संस्कारों की- मोक्ष की परिकल्पनाओं की बलि देने के लिए सहज ही तैयार था- और उसके करुण क्रंदन ने डॉ को मजबूर कर दिया उसे मोक्ष देने के लिए- आज की पीडाओं से मोक्ष देने के लिए। इससे पहले कि वरदान के पुजारी पिता कोई आक्षेप उठाते वरदान को मोक्ष मिल गया। असहनीय दर्द से मुक्ति पाने की इच्छा इतनी तीव्र थी कि कार्डियक अरेस्ट ने उसे अपने आगोश में ले लिया और भीष्म की तरह इच्छामृत्यु मोक्ष मिल गया।

सर्विसिंग

नहीं कुछ भी हो जाए इस महीने एक बार गाडी की सर्विसिंग कराना ही है। बड़ी शर्म आती है जब देखो तब रास्ते में खराब हो जाती है। ऑफीस के लोग कितने अजीब तरीके से देखते हुये गुजर जाते हैं कतराते हुए क्योंकि जानते हैं कि रुके कि पचासों किक लगानी पडेगी या खुद की गाड़ी से पेट्रोल निकाल कर देना पड़ेगा। रोज दर रोज इस पुरानी गाड़ी का खटराग।

सोचते सोचते गाड़ी खींचती हुई रमा चौक पर पहुंच गई। वर्कशॉप में गाड़ी डालने की मंशा से पर्स टटोला। २० का एक और सौ का एक नोट मात्र। ओह इस महीने भी सर्विसिंग नहीं हो पाएगी गाड़ी की। मेकेनिक से प्लग की सफाई करवा कर गाडी स्टार्ट करवा कर घर पहुंच गई।

घर पहुंच कर देखा बड़ा बेटा मदन और छोटा मोहन मायूस से दरवाजे पर बैठे हुए थे। बगल में टूटी पुरानी सी साईकिल पंक्चर पड़ी थी। बच्चों को एक रुपया दिया कि जाओ पंक्चर सुधरवा लो। बड़ा मदन समझदार था- चुपचाप चलने लगा लेकिन छोटा मोहन मचल गया नहीं पचास रुपए दो। साईकिल रोज रोज खराब होती है। एक बार पूरी सर्विसिंग कराएंगे।

ज्यों त्यों बच्चों को समझा बुझा कर भीतर घुसी। निगाह आईने पर पड़ी। बुझी बुझी आँखे, कहीं कहीं सफेदी झलकते निस्तेज बाल, गालों पर कुपोषण दर्शाती झाईंयां, बाहों पर झिरझिरा हो चुका ब्लाउज और धुल धुल कर अपना मूल रंग खो चुकी घिसी बदरंग साड़ी।

आईने ने रमा से कहा कब तक खुद को यूँ खींचोगी चलो एक बार खुद की सर्विसिंग करवा ही लो- और रमा सोचती रही २५ तारीख को पर्स में पडे कुल १२० रूपयों में किस किस की

सर्विसिंग करे। किचन में खाली हो चले डिब्बों की- ड्यूटी पर पहुंचने के लिए सबसे जरूरी लूना की- बच्चों की साईकिल की या आईने ने उससे जो डिमांड की खुद की सर्विसिंग की।

कल की चिताओं को हूल देकर- आंख मुंह पर पानी के छींटे देकर रमा ने खुद की सर्विसिंग कर ली और रात के खाने के लिए दाल छौंकने किचन में घुस गई।

अनाथ

आज सचमुच अनाथ हो गई थी वो।

सबेरे सबेरे पति ने कहा मैं मेरे भाई के साथ उनके खेत पर जा रहा हूँ। बहुत बोर हो रहा हूँ अकेले। शाम तक आउंगा।

ठीक है कहकर चुप्पी साध ली उसने।

काम वाली बाई काम करते करते बोली

क्यों मैडम ऐसे अकेले ही बैठे हो।

न जाने क्यों मन आज बहुत दुखी था। लग रहा था किसी से कुछ सुख दुख की बातें करें। कुछ दर्द शेयर करें। कल सारी रात सो नहीं पाई थी। अजीब सी बेचैनी मथ रही थी

इतने में बेटा आकर बोला माँ मै ससुराल जा रहा हूँ। वहीं रहूंगा एक दो दिन। आज पापा की तबीयत ठीक नहीं है। बेचारे रिटायर्ड इंसान और वो- मम्मीजी भी रात भर घुटनों के दर्द से परेशान जागती रहती है बेचारी कहते कहते बेटा बहू चल दिए बाहर की ओर।

कल पूरी रात पति और बेटा दोनों ने उसकी जागती आंखें और दर्द भरी करवटें बदलती बेचैनी देखी थी। लेकिन- उसके लिए शायद कोई एहसास ही नहीं थे, किसी के दिल में। पतिदेव अपने

भाई के साथ और बेटाजी अपने मम्मी जी पापाजी के पास- वह तो एक अवांछित वस्तु है बस।

दोषी वह खुद है जिंदगी भर नौकरी, घर, रिश्तेदारियां दौड़ दौड़ कर रोबोट की तरह निभाती रही। किसी को कोई कष्ट न हो यह ख्याल रखते हुए अधिक से अधिक जिम्मेदारी ढोती रही। तबीयत भी खराब हुई तो खुद ही अपने कार्यालय की डिस्पेंसरी में जाकर दिखा दिया। दवा ले ली।

धीरे धीरे घर में उसकी स्थिति एक रोबोट की तरह हो गई। उसके भीतर भी एक धड़कता हुआ दिल है- जो, अपने लिए एक भावुक सी विव्हलता, एक प्यारी सी चिंता, एक अपनत्व भरा अपनापन चाहता है। किसी की कहनी अनकहनी उसे भी छील देती है- उद्विग्न करती है- क्यों घंटों घंटों छत पर बैठकर वह सूजी आंखों से बाहर आती है। शायद किसी ने समझना ही नहीं चाहा।

कहते हैं कि माता पिता के मर जाने के बाद बच्चे अनाथ हो जाते हैं लेकिन जब उसके माता-पिता गुजरे तब गृहस्थी की भागदौड़ में, जीवन की उपलब्धियों से भरी भरी सी कभी नहीं सोच पाई कि अनाथ हो गई वो। लेकिन अब उम्र के इस दौर में लग रहा है कि सचमुच अनाथ हो गई है वह। उसकी रूह पूछती रहती है कहां हो मां- कहां हो पिताजी? कहां हो-? एक बार आ जाओ बस बस एक बार।

एक गिलास पानी

परंपरागत रूढ़िवादी परिवार की बहू बनकर आई थी प्रतिमा। दो एकदम अलग संस्कृति। मायके में जहां एक अनुशासित खुलापन और बेलौस अपनेपन का प्रदर्शन वहीं ससुराल में एक संतुलित दूरी रिश्तों में। ससुर जी कभी बहुओं से बात नहीं करते। घर में प्रवेश करते तो बड़े खांस खंखार कर। प्रतिमा को बड़ा अजीब लगता। ये कैसा लिहाज जहाँ पिता तुल्य ससुरजी एक गिलास पानी भी सीधे बहू से नहीं मांगते। भूख से परेशान हैं तो सासुजी की अनुपस्थिति में कभी-कभार बहू प्रतिमा से थाली परोसने के लिए कह दें- मगर नहीं। बहुओं से बात ना करने की रुढिवादिता।

एक दिन बाहर सब्जी वाली से काफी देर तक बढ़िया बतिया कर ससुरजी ने ज्योहिं भीतर कदम रखा- सुना- पर्दे के पीछे से बहू अपनी सासु माँ से कह रही है- माँजी सोच रही हूँ कल से मैं भी सब्जी भाजी बेचना शुरु कर दूँ। हैरान परेशान सासुजी उसकी बात को कितना समझी नहीं समझी लेकिन ससुरजी अच्छे से समझ गये और दूसरे ही दिन से उस घर की बहुत सी रूढ़िवादी परंपराएं टूटने लगीं जब बाबूजी ने पुकार कर कहा- बेटा प्रतिमा एक गिलास पानी तो देना बहू।- और गदगद प्रतिमा सर पर हल्का सा पल्लू संभाले गिलास लिए दौड़ पड़ी।

अछोर प्रेम

नहीं मैं नहीं ले सकती तुमसे ये फूल। नहीं स्वीकार कर सकती हूं तुम्हारे प्रणय निवेदन को अमन- मैं मजबूर हूँ।

क्यों? आज इस प्रेम दिवस पर तुम मेरा निवेदन नहीं स्वीकार रही हो तो क्या मैं समझूं कि तुम किसी और के प्रेम के इंतजार में हो।

नहीं नहीं अमन मत लगाओ इतना बड़ा इल्जाम मुझपर। मैने सदैव अमन की ही कामना रखी है अपने दिल में। मगर मैं क्या करूँ कैसे बताऊं कि अब मैं तुम्हारे लायक नहीं रही अमन।

तुम जब पिछले दिनों छुट्टी पर चंडीगढ़ गए थे यहां बॉर्डर कुछ आतंकवादियों ने हमारे गांव पर हमला किया और गांव की कुछ लड़कियों को अपनी हवस का शिकार बनाया। मैं बदनसीब भी उनमें से एक थी अमन- अब तुम्ही बताओ अमन पैरों तले कुचला रौंदा गया फूल क्या ईश्वर पर चढता है कभी?- कहते कहते फूट फूट कर रो पडी स्नेहा।

एक क्षण के लिए अमन सकते में रह गया मगर दूसरे ही क्षण उसके भीतर का फौजी सुरक्षा प्रहरी जाग गया।

सुबकती हुई निर्दोष धरा को गले से लगाते हुए उसने बस एक ही वाक्य कहा,- धरा इन आतंकवादियों के नापाक कदम हमारी धरती पर पडते हैं तो क्या हम अपनी धरती को नापाक मानते हैं- नहीं ना? फिर उन वहशी दरिंदों की नापाक हरकत से भला तुम कहाँ मैली हुई। तुम तो इस पावन धरा की तरह पावन हो जो सदा अमन की चाहत रही हो। भूल जाओ सब कुछ। तुम मेरी हो सदा के लिए। अब उन वहशी दरिंदों के लिए मेरी बंदूक की गोली और भी निर्मम हो जाएगी देखना तुम।- और प्रेम दीवानी धरा की आंखें निर्निमेष सी न्यौछावर होतीं रहीं अमन की पावन चाहत पर- उस अपरिभाषित प्रेम दिवस पर।

बिना शीर्षक का वृद्धाश्रम

बहू ओ बहू जरा सुन तो बेटा- ये पैरों का दर्द चैन नहीं लेने दे रहा है थोड़ा गरम पानी दे दे सिंकाई करूंगी तो अच्छा लगेगा- कराहती कांखती अम्मा चौथी बार गुहार कर रही थी लेकिन सोफे पर बैठी टीवी देख रही बहू के कानों पर जूं नहीं रेंगी। फोन बंद कर जोर से सास का हाथ पकड कर उसे पीछे वाले दडबेनुमा कमरे में ले जाकर झिलंगी खाट पर बैठा दिया- चीखती हुई बोली 'कितनी बार कहा है अपने कमरे में ही रहा करो बाहर ना निकला करो सुनती ही नहीं हो खबरदार जो अब बाहर निकली।मेरी सहेलियों के साथ आकर बैठने की जरूरत नहीं है- चुपचाप बैठी रहो कमरे में'

रेखा की सहेलियाँ बतिया रहीं थी। टॉपिक था वे लोग जो अपने वृद्ध मां बाप को वृद्धाश्रम में पहुंचा देते हैं कैसा कलेजा होगा कितने गिरे हुए होते हैं वे लोग आदि। इतने में एक सहेली ने पूछा अरे रेखा तेरी सासु माँ नहीं दिख रहीं हैं कहां हैं? बडे गर्व से रेखा ने बताया कि वे अपने कमरे में आराम कर रहीं हैं, हम उन्हें वक्त बेवक्त परेशान नहीं करते। अपनी मर्जी की मालिक हैं।

एक पल के लिए भी उस कमरे से निकल कर बेटे बहू पोते के साथ बैठने को तरसती हुई- घर की किसी भी बात में हस्तक्षेप न करने की हिदायतों से सहमी- कमरे से बाहर बहू की परमिशन के बिना न आने से बंधी अम्मा अपने घर के भीतर के उस वृद्धाश्रम में बैठी इंतजार कर रही हैं- जब सबका खाना पीना होने के बाद उसे भी कुछ टुकड़े मिल जाएंगे और अपनी मर्जी की मालकिन नींद उनके साथ साथ उनकी भावुक तमन्नाओं को भी सुला देगी।

पैसा बोलता है

दिदिया ओ दिदिया कहाँ हो भई। गणेश मंदिर चलना है ना?

हर मास चतुर्थी को गणेश मंदिर जाना कामिनी का बरसों से चला आ रहा नियम था सो पड़ोसन आवाज देती हुई भीतर आ गई। दूसरे ही पल कामिनी को देखकर घबरा गई- चेहरा इतना सूज गया था कि अभी चमड़ी फट कर रक्त बाहर आ जाएगा। सूजन के कारण आँखे पूरी तरह छिप गईं थीं। हाथ पैर की सूजन ने बिस्तर से उठना मुहाल कर दिया था। मुँह से आवाज भी नहीं निकल रही थी।

रानी ने घबराहट में बाकी पड़ोसनों को पुकार लगायी। सब अटकलें लगने लगी। इतने में कामिनी के पतिदेव डॉ को लेकर पहुँच गये। पड़ताल के बाद डॉ ने फौरन बड़े शहर के बड़े अस्पताल में भर्ती करने के लिए कह दिया।कामिनी की सांसें रुकीं जा रहीं थीं।

अर्ध बेहोशी की हालत में कामिनी ने बताया कि वह पास के बगीचे में फूल और दूर्वा तोड़ने गई थी। लौटी बस उसके बाद यह हालत हो गई। कहीं कहीं त्वचा पर फफोले भी उभरने लगे- त्वचा काली पड़ी जा रही थी।

बड़े शहर के भव्य अस्पताल में भर्ती कराया गया। आनन फानन जीवन रक्षक उपकरण लग गए। रक्त की पड़ताल हो गई। शरीर का पूरा रक्त काला हो गया था। डॉक्टर खुद भी मरीज की गंभीर हालत पर सशंकित थे। मंहगी से मंहगी मशीनों पर रोग निदान हुआ कि किसी अंग्रेजी से नाम वाले कीड़े के काटने से यह हालत हुई थी कामिनी की। बस पैसों की बैसाखियों पर डाक्टरों की दौड़ लग गई। और कुछ समय बाद से यमराज के पाश में पहुँच चुकी जिंदगी धीरे धीरे वापस आने लगी।

अस्पताल में चारों ओर पैसा बोल रहा था मानो। मँहगी जीवनरक्षक दवाएं, ऑक्सीजन, सलाईन, आईसीयू, के बाहर दुआएं मांगते चेहरे।- और १० दिन के बाद कामिनी लौट आई अपने घर अपनों के बीच।

दो दिन बाद उसकी कामवाली बाई की बूढी सास गोद में कुपोषित से दिख रहे बच्चे को लिये आई और बताया कि बीबीजी कमला को दो दिन पहले कोई अजीब सी बीमारी हो गई थी। पूरे शरीर में सूजन और काला पन हो गया था। सरकारी दवाखाने में दो दिन इलाज चला लेकिन हालत बदतर हो गई और कल कमला मर गई। बीबीजी कुछ पैसे दे दो दाह संस्कार के लिए। विद्युत शव दाह केंद्र में मुर्दा जलाने के लिए पैसे माँग रहे हैं।

और किंकर्तव्यविमूढ सी खड़ी रह गई कामिनी सोचते हुए कि सचमुच पैसा कितना बोला जो आज वह सही सलामत खड़ी है और दूसरी ओर गरीब कमला की दुखियारी सास शवदाह के लिए हाथ पसारे खड़ी है- न जाने क्यों फूट फूट कर रो पड़ी कामिनी पैसे की अदृश्य अनसुनी बोली को सुन कर।

दीप की कहानी

संध्या आरती में जलते एक दीप-ओंकार के अहं और दीपावली की जगमग में हजारों हजार दीपों संग जलते- अपनी उपयोगिता के प्रति संशयित एक उदास दीप की कहानी।

संध्या आरती में जलता दीप अहं भाव में रमा, उमग उमग कर रोशन हो रहा कि मैं ईश भक्ति में जल रहा हूं वहीं मंदिर के बाहर दीपावली की रात रंगबिरंगी सप्तरंगी जगमगाती लड़ियों वाली रोशनी में एक कोने में अपनी ही टिमटिमाती उजास से शर्मिंदा एक नन्हा सा दीप- दोनों आमने सामने जल रहे हैं। दीप ओंकार ने उदास दीप पर तुच्छ दृष्टि डालकर अपनी ज्योति को और अधिक दमक दी। उदास दीप अपने में सिमट कर और मद्धिम हो गया।

न जाने कब तक यह खेल चलता रहा। ओंकार दीप मंदिर के भीतर मूर्ति के संमुख इतराता और ही दमकता एवं बाहर जगमगाती रोशनी में व्यर्थ ही जल रहा उदास दीप व्यथित हो सिमट जाता।

धीरे-धीरे निशा-रानी ने अपना आंचल फैलाया- अंधकार घनीभूत हो चला। ओंकार दीप दमक दमक कर अपनी चमक खो चला, उसकी बाती भी अवसान की ओर बढ़ चली और फड़फड़ा कर बुझने लगी।

बाहर रोशन लडियां भी बुझाई जाने लगीं। अपने आप में सिमटा उदास दीप अभी भी अच्छे से प्रज्वलित हो रहा था क्योंकि उसने अपनी ऊर्जा को ओंकार दीप की तरह व्यर्थ दंभ में नहीं गंवाया था। इतने में पुजारी जी वहां आये उन्होंने उस प्रज्वलित दीप को उठाकर भगवान की मूर्ति के सामने रख दिया और बुझती बाती वाले दीप को एक ओर कर दिया।

अब ओंकार दीप ने बुझते बुझते जीवन का सबक पाया कि वक्त को पहचान कर चलो। वक्त कभी किसी का नहीं होता। स्थितियों के अनचीन्हे रास्तों पर साथ छोड़ देता है इसलिए अपनी मौलिक शक्ति और ऊर्जा को व्यर्थ न गंवाएं। वक्त की शक्ति को कभी न आजमांएं। समय सदैव अजेय है अनचीन्हा है अजर अमर है। इसे सम्मान दें।

मुस्कान का धर्म

आज रमा का मन बहुत उदास था। भगवान भोलेनाथ और भगवती पार्वती की तस्वीर पर नजर जा रही थी बार बार। गोद में बाल गणेश बगल में नंदी। और बस यहीं आकर रमा का दिल विद्रोह करने लगा। हां बड़े भगवान हो.. अपने परिवार को समेटे बैठे हो। लेकिन मेरे परिवार की गऊ माता कहां हैं। कहां है मेरी लछमी। चरवाहा हरी घास रखता। गायकी दूध निकालने की बालटी पकड़े खड़ा रहता मगर मजाल है हाथ लगा पाएं। रंभा रंभा कर पूरा मोहल्ला सर पर उठाए रखती जब तक श्यामा के बाबूजी जाकर गर्दन पर प्यार से हाथ फेरते हुए खरहरा न करें और अपने हाथों से खली-सानी बना कर सामने न रख दें।

आज वही खूंटा अकेला सा उदास खड़ा है। जंगल चरने के लिए रंगू के साथ भेजा था रोज की तरह। सब गाएं आ गईं मगर लछमी नहीं आई। मन आशंकाओं के बीच उब डूब हो रहा था। कोई जंगली जानवर तो नहीं ले गया खींच कर? किसी गड्ढे में तो नहीं गिर गई?आवारा घूमते लावारिस जानवरों को पकड़ कर कांजी हाउस ले जाने वाले तो नहीं ले गए? रमा का मन आंखों से बस पिघलने ही वाला था कि सामने से रज्जाक कसाई आता दिखाई दिया पीछे पीछे लछमी भी चली आ रही है हांफती सी घबराई सी।

रमा का दिल उछल कर गले तक आ गया। हे राम भली करो ये कसाई क्यों आ रहा है।

लो काकी संभालो अपनी अमानत। इलाही दल और भीम दल के बीच ठन गई गोमांस और गौहत्या की बात पर। बरछी तलवारें निकल पडीं। दोनों ही दल इस बिचारी को खींच तान कर अपनी ओर लेना चाह रहे थे। मैंने देखा कि ये तो अपने शुक्ला गुरुजी की गाय है.. तो हाथ पैर जोड़ कर ले आया।

और रमा ठगी सी बस खड़ी रही सोचती हुई कि जिस रज्जाक को कसाई और हृदयहीन मानकर वे लोग अपने जानवरों को उसके दरवाजे तक नहीं जाने देते- किसी के भी जानवर बछड़े खोते तो सबसे पहली शक की सुई रज्जाक पर जाती- आज वही देवदूत सा लछमी को ले आया- भला हुआ मेरी निगोडी जबान चली नहीं। बिना सत्य जाने कुछ कह देती तो कैसे आंख मिलाती खुद से और बेचारे भले मानुष से।

लगा कि भोलेनाथ और भगवती के चेहरों पर मुस्कराहट खिल उठी है जो कहीं न कहीं रज्जाक के चेहरे पर भी खिल उठी होगी लछमी को बचाकर लाते वक्त।।

आहत आत्मा

गुरुजी की कथा चल रही थी- चल रही थी, लेकिन रंजना के विचारों का प्रवाह तो दौड़ रहा था दुविधा में कुछ हां ना की स्थिति में।

एक मन कह रहा था बेटे की उजड़ी गृहस्थी के लिए यह निर्णय सही है। जल्लाद बहू की बात मान कर एक बड़ी सी रकम उसे दे कर छुटकारा पा लें। लेकिन आहत आत्मा नहीं है मान रही थी।क्या कसूर था उनके परिवार या उनके बेटे का। वह बहू जिसने कभी भी पति या सास ससुर को विश्वास में नहीं लिया। पढ़ाई लिखाई से लेकर नौकरी की कंडीशन्स तक की हर बात छिपाए रखी। और एकाएक एक दिन ऐलान कर दिया कि वह नौकरी के लिए सुदूर प्रांत जा रही है कि उसे उनके मूल प्रदेश में नौकरी नहीं मिल सकती- कि उसके तथाकथित पिता ने कोर्ट केस कर रखे हैं उसकी डिग्री को लेकर।

बमुश्किल दस महीने पति के साथ रहकर छः महीने की उस गर्भवती ने घर छोड़ा और मैके से ही सवा महिने के बच्चे को लेकर नौकरी पर सुदूर स्थान पर चली गई तब तक भी वह सरल परिवार उसके असली उद्देश्य को जान नहीं पाया था कि आखिर उसने शादी ही क्यों की यदि उसे गृहस्थी नहीं बसाना था।

अपनी आत्मा की आवाज को रौंदकर उन्होंने बहू की मांग पूरी कर दी और अपने बेटे की छःसाल से उजड़ी पड़ी अकेली दुनिया में नई उम्मीदें ढूंढ लीं। लेकिन उनकी आत्मा रो रो कर पूछती रहती है उस परमात्मा से कि क्यों ये सब विडंबनाएं उनके साथ। जो कसूर कभी नहीं किए उन अनजाने गुनाहों की इतनी बड़ी सजाएं क्यों?

बहू की डिमांड ने उन्हें जमीन पर ला पटका है जहां से फिर एकबार उठ खड़ा होना होगा जीवन युद्ध में जूझना होगा लेकिन निर्दोष आहत आत्मा क्या फिर से खड़ी हो पाएगी?

गलियारा

वो गलियारा गवाह था उस दुखियारी पगली की एक एक चीख- एक एक दर्द- एक एक अनजानी विनती- का जो उस नीम पगली ने शायद- शायद नहीं जरूर ही की होगी उन वहशी दरिंदों से- जिन्होंने काली अमावसी रात के न जाने किस शैतानी पहर में उस नादान बेसुध पगली को रौंद डाला। कैसे होंगे वे नारकीय जीव जिनकी काम लोलुपता ने उस पगली अबला की कोख को कलंकित कर दिया और रात के अंधेरे में किया पापियों का कुकर्म साकार होने लगा।

गली मुहल्ले की औरतें उसे दुरदुरातीं- आयं-बायं बकतीं, मगर उसकी भोली निष्पाप आँखों में आँसू और मजबूर भूख देखकर पिघल जातीं और उसे कुछ न कुछ खिला पिला देतीं।

सचमुच वह गलियारा न जाने कितनी दया, कितनी भूख और कितनी दुर्दांत-दुर्दशा को अपने भीतर समेटे हुए था। दोनों ओर मध्यवर्गीय गृहस्थों के आम परिवार के लगभग २० घर- बीच में वह लंबा गलियारा- जिसका अंत गली के बंद छोर पर था- वह तुच्छ निकृष्ट गालियों से भरी तू तू मैं मैं से लेकर गणेश और दुर्गा स्थापना तक के पावन क्षणों तक का मूक दर्शक था

और आज वह निर्द्वंद गलियारा गूंज उठा नन्ही मासूम चीखों से- और पगली की अजीब कराहों किलकारियों से।

टुकुर टुकुर बच्चे को ताक रही पगली की आँखों में ममत्व की चमक ने महिला वर्ग को अतिरिक्त सहृदयी बना दिया और शुरू

हो गई जच्चा बच्चा की बाकायदा देखभाल। सोंठ गोंद के लड्डुओं के साथ मेवे का हरीरा। फुटपाथ पर मैला कुचौला चादर का बिस्तर एक छोटी सी झोंपडी में तब्दील हो गया और एकाएक हंस पड़ा- खुशी से झूम उठा गलियारा जब उस पगली ने बच्चे को अमृत पान कराया और पूरी समझदारी से अपने आंचल में छिपा लिया।

कायर दुष्कर्मियों, कामी पुरुषों का कृत्य उस गलियारे को अनायास ही अभिभावक बना गया। वह गलियारा पितृतुल्य दस्तावेज- भावभीना इतिहास बन गया बुराई पर अच्छाई की विजय का- हैवानियत पर इंसानियत की जीत का विजय पथ बन गया।

अधूरा क्रांति दिवस

गली गली में कुकुर मुत्तों की तरह उग आए नर्सरी स्कूल और पब्लिक स्कूलों के बीच जब कस्बे की एकमात्रठ हिन्दी सरकारी स्कूल को भी नगरपरिषद का हिन्दी दिवस मनाने का नोटिस मिला तो प्रधानाचार्यजी के स्वदेश-प्रेम को पंख लग गए मानों । जोरों शोरों से तैयारियां शुरु हो गईं। बंदनवार सजावटों पर हिन्दी में सूक्ति वाक्य लिखे गए।

जाने कितने नये पुराने कवियों की पंक्तियाँ रट रट कर शिक्षकों ने भाषण तैयार किये। बच्चे हिन्दी नाटक की रिहर्सल में दिन रात एक कर रहे हैं। क्यों न हो? जिलाधिकारी महोदय और शिक्षा बोर्ड के अध्यक्ष, प्रमुख अतिथि के रूप में आमंत्रित किए गए हैं, मौखिक स्वीकृति प्राप्त हो चुकी है भई।

१४ सितंबर की भावभीनी सुबह हर ओर लकदक गहमा-गहमी। इस उत्सवी उत्साह पर घडों पानी पड़ गया जब ज्ञात हुआ कि दोनों अतिथि दूसरी पब्लिक स्कूलों में 'बुक' हैं। जिन स्कूलों में हिन्दी में बात करना भी अपराध है, उन्ही स्कूलों में हिन्दी

दिवस पर अभूतपूर्व आयोजन हो रहे हैं! पी ए ने बताया 'आपने रिटन परमीशन' ले लेनी चाहिए थी!- यह भी कि हिन्दी में लिखा गया 'अनुमति पत्र' आगे ही नहीं बढ़ा अटका रहा उसी जगह जिस तरह ७० सालों से हिन्दी एक ही जगह ठिठकी कदम-ताल कर रही है।।- और क्रांति दिवस सा वह हिन्दी दिवस आम दिवस सा मन गया।।

माँ.. एक तस्वीर सी

नानी कहती थी माँ बड़ी खूबसूरत थी, तस्वीर सी। कहाँ जानती थी बेचारी कि उसकी सुगढ़ सलोनी बिटिया धीरे धीरे मूक तस्वीर में ढल रही है।

बताया था चाची ने रमा को, कि पढ़ी लिखी गोल्ड मेडलिस्ट माँ की आँखे उसी दिन पथरा गईं थीं- जिस दिन किरानी के सामान जिसमें बंध कर आए थे, अखबार के उन टुकड़ों को माँ को पढ़ता देखकर, सासु माँ के ताने पर देवरजी, बड़े जेठजी और अन्यों की व्यंगात्मक हंसी पर झुकीं माँ की आँखों ने उठना बंद कर दिया था। नानाजी के घर मे निरे बचपन से पढीं चंदामामा, नंदन, पराग और बाद में प्रसाद, प्रेमचंद, महादेवी के रचना-अक्षर नृत्य करने लगे माँ की पथराई आँखों और जड़ होते तन-मन के सामने। सयानी होती रमा ने भी माँ को तस्वीर में ढलते देखा। जिंदगी भर बड़े बाबूजी, चाचाजी की बेजा गर्जना पर पिताजी की एक उठी आवाज के लिए माँ के मन-प्राण-कान तरसते रहे। माँ की गूंगी बहरी संवेदनाओं और भीरू पिता के पंगु सायों में पलते भैया का कुचला बचपन माँ के भीतर नासूर बनता रहा। अन्य बच्चों की गलतियों को भैया पर थोपे झूठे इल्जामों को समझ कर भी भैय्या को ही पीट पीट कर खुद अधमरी ठूंठ सी मेरी स्नेह वंचिता भावुक

जननी, उस अभिमानी परिवेश में दो बेटों के माता-पिता होने के गर्वोन्नत सिरों के सामने बेटी की माँ होने का अभिशाप झेलती भीतर से नितांत अकेली मेरी असहाय माँ अचल तस्वीर बन चली।

माँ का दिमाग पूरी तरह चुक गया था। जड़ हो चुकी थीं वे। मनः चिकित्सा अबूझ रही।माँ की विदेही पीड़ा की साक्षी और न्यायाधीश दोनों मैं रमा ही थी, परंतु कठघरे में किसे खड़ा करूं? बेमेल विवाह के दोषी नाना मामा को, भीरु सीधे साधे दब्बू बाबूजी को या उस जमाने की पाखंडी संस्कृति को- जहाँ स्त्रियां इंसान नहीं मात्र देह होतीं थीं। जीते जी ही दीवारों पर टंगी तस्वीरें होती थीं बस!!

कुंती

ओह ये बच्चा इतना क्यों रो रहा है। अभी मुझे नाईट शिफ्ट पर ड्यूटी जाना है--बुदबुदाते हुए कुंती उठकर बैठ गई।

अस्पताल के परिसर में बसे उस निवासी होस्टल में कुंती अनेक वर्षों से रह रही थी। पति के घर से बांझ और परित्यक्ता की सामाजिक डिग्रियों के साथ निकाली गई कुंती, अपने आत्मसम्मान की गठरी संभाले हुए, इस अस्पताल तक पहुंच गई। अस्पताल की संचालिका बड़ी अच्छी और समझदार महिला थीं। कुंती के जख्मों को कुरेदे बिना ही उन्होने कुंती को आसरा दिया। नर्सिंग की ट्रेनिंग देकर अस्पताल में ही नौकरी और क्वार्टर दे दिया। १० वर्षों के अपने सफर को याद करते हुए कुंती संचालिका मंदाताई के एहसानों के तले आज भी नतमस्तक हो जाती है और मन ही मन दुहरा लेती है अपने आप से किए वादे को- कि मरीजों की सेवा में ही अपने संपूर्ण जीवन की सार्थकता ढूंढ लेगी- किसी मोह माया को अपने आसपास नहीं फटकने देगी।

मगर आज न जाने क्यों उस बच्चे के रोने की आवाज के साथ उसका हृदय भी मसोस रहा था। दस सालों से बच्चों के रोने

की आवाजें उसके लिए बहुत ही आम सी बात हो गई थी मगर आज इस बच्चे का रोना- ओह ओह कुंती ने सायास दिल को संभाला और ड्यूटी पर जाने के लिए तैयार होने लगी।

अस्पताल से लगे प्रसूति कक्ष से बच्चे के रोने की आवाज बंद ही नहीं हो रही थी- हां क्षीण हो कर और भी दर्दीली और पीड़ा की साक्षी हो गयी थी।

अस्पताल पहुंच कर कुंती ने प्रसूति कक्ष में कदम रखे। रोता हुआ बच्चा बगल में ही बेसुध मौत का इंतजार कर रही औरत के सूखे आँचल को टटोल टटोल कर ममता का अमृत ढूंढ रहा था और बैठे गले से दर्दनाक आवाजें कर रहा था।

बच्चे की इस मासूम सी कोशिश से कुंती का कलेजा मुँह को आ गया। पता लगा कि वह अनाथ विक्षिप्त सी औरत कुछ दिनों से अस्पताल के परिसर में ही घूम रही थी। आज उसकी बिगड़ती स्थिति को देखते हुए अस्पताल प्रशासन ने उसकी प्रसूति करवा दी मगर मरणासन्न माँ का वह अभागा अंश दुनिया में कदम रखते ही अनाथ हो गया।

उसके अनाथ और परिचय विहीन अस्तित्व को एक चिरपरिचित भद्दी सी गाली से नवाजते हुए आया ने बच्चे को उठाया। न जाने क्या था उस बच्चे की व्याकुलता में, कि, निर्मोह की दीक्षा से बंधी कुंती विचलित हो उठी। क्या फिर एक कर्ण नाम के दाग को लेकर कौरवों की दुनिया में तिल तिल मर मर कर जीएगा? क्या- फिर वह गंदी गाली उस निर्दोष की नियति बनेगी जिसने अभी तक ठीक तरह से आँख भी नहीं खोली है? नहीं नहीं- झुरझुरी आ गयी कुंती को- अबके कुंती जमाने की बुरी नजर से बचाएगी उस निर्दोष कर्ण को। कुंती अपने नाम को अब समाज की कसौटियों पर नहीं कसेगी- हाँ कुंती अब अपने प्रति एक फर्ज निभाएगी- एक बच्चे के प्रति अनजाना सा फर्ज निभाएगी।

कुंती ने आगे बढकर कर्ण को आया के हाथ से ले लिया और चल दी प्रशासकीय कार्यालय की ओर- अनाथ बच्चे की माँ बनने की प्रक्रिया शुरू करने के लिए।

और आसपास उपस्थित सभी महिलाएं कठोर और निर्मोही मानी जाने वाली कुंती के दृढ़ कदमों की ठक ठक ठक को गुनतीं रह गईं

अनेकता में एकता

अरे यार रानी- आज फिर वो बेवकूफ पंदी मेरे घर आया था। मेरे लिये उसकी आंखों में वही कुछ था कहते कहते सूसन जेकब एकदम चुप हो गई क्योंकि मैडम आ गईं थी। परंपरागत ब्राम्हण परिवार की पुत्री रानी शुक्ला उसके इस बेबाक संभाषण से संकुचित होकर बगलें झांकने लगती। वे चार सहेलियाँ जूनियर कॉलेज में मिनी इंडिया की प्रतिनिधि ही थीं मानो। सुंदर से स्कर्ट और गाउन में फुदकती सूसन जेकब, अपने ढीले-ढाले सलवार कुर्ते में लदड फदड चुन्नी संभालने में ही दोहरी हुई जाती तनिक भारी सी प्रीतम कौर, बुर्के को सीट पर फेंक कर कॉलेज में हुड़दंग मचाती शबनम खान और चौथी रानी शुक्ला कट्टर बाम्हन परिवार की छुई-मुई सी बिटिया। स्कूल का या और कोई भी कार्यक्रम पूर्ण न होता जहाँ ये चारों सखियाँ अपनी अपनी विशेषताओं के साथ अनेकता में एकता की मिसाल बनी हुई शामिल नहीं होतीं। दीपावली के दिए जलाना हों या ईदी के लिये लडना झगड़ना, गुरुद्वारे में ग्रंथ साहिब की अरदास हो या चर्च में कंफेशन एक साथ पारदर्शी सा सब कुछ।

और अनेकता में एकता की मिठास अपने भीतर लिए ये सहेलियाँ नियति के फैसले के आगे हार गईं लेकिन हारते हारते भी अपने देश की सांस्कृतिक विशेषता जतला गईं। कोचिंग सेंटर में एकाएक लगी आग में छोटी क्लास के रजत को झुलसने से बचाते हुए शबनम खुद काफी झुलस गई और अस्पताल में जीवन मृत्यु के बीच झूल रही है। सखि प्रीतो को साथ लेकर ही नीचे उतरने की जिद लिए सूसन भी लपटों में घिर गई। और बच गई अकेली रानी जो संयोगवश उस समय शबनम के लिए खजूर लेने नीचे गई थी

क्योंकि रोजाधारी शब्बी को भूख सता रही थी। अपनी सखियों की याद में धारोंधार अश्रु बहाती हुई रानी एक क्षण शबनम बन कर खान दंपति को सांत्वना देती दूसरे क्षण सूसन बन जेकब परिवार के गले लग जाती है। जानती है कि उसे तो इन चारों परिवारों के बीच मिनी इंडिया की पहचान बन कर अनेकता में एकता की मिठास बन कर ही रहना होगा अपनी सखियों की स्मृतियों के साथ।

फरिश्ता

घनघोर अंधेरी रात। झींगुरों का समवेत स्वर उस भयानकता को कुछ और ही बढ़ा रहा था। एकाएक तेज आवाज के साथ ऑटो का पहिया पंक्चर हो गया। कुछ देर बाद गाड़ी के तेज ब्रेक की आवाज के साथ एक कार रुकी। ऑटो में लड़की को देखकर चार आँखों में कुछ अजीब सी चमक भर गई। इससे पहले कि कोई कुछ पूछे.. ऑटो ड्राइवर सामने ड्रायर में रखी फाईल ले कर कार मालिक से बोला मालिक एक औरत है शायद उसे एड्स की बीमारी है। बेहोश हो गई है। जरा उसे अस्पताल तक पहुंचा दीजिए साहब। मरमरा गई तो मैं बेचारा व्यर्थ ही फंस जाउंगा साहब। कहते कहते एड्स की मेडिकल फाईल उसने मालिक की ओर बढ़ाई। फाईल देखने से पहले ही उन दो आँखों की वहशी चमक में दहशत और भय भर गया और अरे नहीं हमारे पास समय नहीं है कहते कहते कार मालिक और उसका दोस्त कार लेकर उड़ गए। बूढ़े ऑटो ड्राइवर और सहमी हुई लड़की की उड़ी हुई रंगत लौट आई। सामने से आती पोलिस जीप की हेडलाईट के प्रकाश में लड़की ने बढ़ कर अपने उस रक्षक के पैर छू लिए और लेडी कांस्टेबल के पास जाकर बैठ गयी।.. और उस देवदूत खुदा के बंदे ने वह एड्स की फाइल सीट के नीचे छिपाकर रख दी.. किसी अगली दीपा सीता फरहा या सूजैन की रक्षा के लिए।

खानदानी

ओह ये मरी गर्मी तो जान लिए जा रही है।

उमस भरे उस कमरे में पंखे भी काम नहीं दे रहे थे। बड़ी सी खानदानी हवेली बड़े बड़े दामी पर्दों, चिक और ऊंचे रोशनदानों से सुसज्जित थी।

मीनल शहरी रीति रिवाजों में पली बढ़ी लडकी- ब्याह कर उस बड़ी सी हवेली में आई। वह क्या जाने पर्दे और रोशनदानों की कहानियाँ। पति किसी कार्य से बाहर गांव गए थे। मीनल को उस उमस भरे कमरे में नींद नहीं आ रही थी। सासुजी ससुरजी और दादा ससुरजी अपने-अपने कमरे में आराम से सो रहे थे।उमस और गर्मी से परेशान मीनल ने कमरे में रखा पुराना सोफा बाहर हवेली के सामने बने छोटे से बगीचे में खींच लिया और उस पर लेट गई। ठंडी ठंडी खुशबूदार हवा में कब उसकी आंख लग गयी उसे पता ही नहीं चला।

सुबह सुबह आँख खुली। प्यारी पुरवैया के साथ नींद की खुमारी। मीनल बिलकुल भूल गई थी कि वह अपने खानदानी ससुराल में है। अंगडाई लेते हुए आराम से उठ कर बैठी तो उसने देखा कि कुछ ही दूर पर कुर्सी पर एक धुंधली सी आकृति दिखाई दे रही है।

हड़बड़ाई सी वह उठ कर खड़ी हो गई। देखा कि वे उसके पूजनीय वृद्ध दादा ससुरजी थे जो ना जाने कब से वहाँ बैठे थे। उनके चरणस्पर्श करते हुए मीनल ने पूछा दादाजी आप यहाँ इतनी सुबह?

और उन्होने जो कहा उसे सुनकर मीनल खुद अपने आपमें शर्मिंदगी से भर गई 'वे कह रहे थे बिटिया जिस घर की अनमोल बहू बेटियाँ खुले आसमान के नीचे बगीचे में बेसुध सो रही हों उस

घर के बुजुर्ग को कैसे नींद आ सकेगी। अब खानदान की इज्जत की रक्षा की खातिर तुम्हारी चौकीदारी करने के लिए किसी नौकर को भी नहीं कह सकता था मैं। इसलिए मैंने ही यहाँ रात की पहरेदारी सँभाल ली- कहते कहते वे अपने अर्धपोपले मुख से हँस दिए'- और मीनल उस पर तो घडों पानी पड़ गया था मानो। उनकी बात पर ना कुछ प्रतिक्रिया दे पाई ना कुछ कह पाई- चुपचाप अपने कमरे में चली आई- खानदान की आन-बान-शान को सदैव बनाए रखने के दृढ़ संकल्प के साथ।

अनूठी नारी

रानी सारंध्रा सचमुच बड़े घर की बेटी थी। पंच परमेश्वर की परीक्षा में शतरंज के खिलाड़ियों में से घमंड का पुतला के खून सफेद को नैराश्य लीला का प्रारब्ध कहती है और सवा सेर गेहूँ के बदले नमक का दारोगा की ईदगाह पर दो भाई आत्माराम और राजा हरदौल के बीच वैर का अंत कर देती है। शांति की सुहाग की साड़ी को कफन और गरीब की हाय की तरह मर्यादा की वेदी पर सद्गति सी उसकी सौत को दे देती है। मगर दो बहनें फातिहा और सती का ब्रम्ह का स्वांग रामलीला में होली का उपहार बन कर रह जाता है। परंतु गुप्त धन छीन कर अंततः पूस की रात में वह बेटों वाली विधवा एक्ट्रेस सा सत्याग्रह करके कजाकी मैकू और घरजमाई रंगीले बाबू को दो बैलों की कथा सुनाकर सुजान भगत बना ही देती है।

खुशी का एक पल

'मैं एक मां हूँ रीता। किस तरह मैं अपने जमीर को समझाऊं। किस तरह मैं एक मां से उसका हक छीन पाऊंगी रीता! नहीं नहीं मुझसे नहीं होगा ये सब। मैं अपनी ममता का तमाशा नहीं बना सकती।'

कहते-कहते हांफने लगी शर्मीला। सामान्य मध्य वर्गीय परिवार था शम्मी का। आय का साधन अर्थात पति की सीमित आय और शम्मी की सिलाई मशीन बस।

बेटी को अच्छी स्कूल में एडमिशन दिलवाने के लिए पैसों की कमी थी। उसकी सहेली रीता दवाखाने में नर्स थी उसने रीता को रास्ता सुझाया सरोगेसी का। बरसों से सिलाई करते हुए रंग बिरंगे टुकडों से जोड़ लगाकर सिलते हुए- कपडों की खूबसूरती बढ़ाने में महारत हासिल है शम्मी को। मगर इंसानों की जिंदगी में अपनी ओर से कुछ जोड़कर उनकी जिंदगी में पूर्णता और खूबसूरती लाना यह एक नयी सी स्थिति थी उसके लिए।

लाख मन को समझाती मगर अपनी कोख का सौदा- ममता की नीलामी- पति के पतित्व पर भावुक प्रहार। क्या करे शम्मी?

आखिर बेटी के भविष्य की आस जीत गई। नाना प्रकार से रीता ने उन दोनों को मना ही लिया।

सही समय पर शम्मी ने संतान को जन्म दिया। सरोगेट मदर के समझौते के अनुसार अपनी संतान के दुनियावी माता पिता का नाम पता ना जानते हुए भी अपनी कोख में पली संतान को उसके जैविक माता-पिता को सौंप दिया। शिशु को गोद में लेते हुए उस मजबूर मां के चेहरे पर खुशियों की बदली उमड़ पड़ी और नैनों से बरस पड़ी- न जाने कब से बच्चे के लिए तरसती उस 'दूसरी मां' की आंखों में कृतज्ञता के आंसुओं ने- उस एक क्षण ने शम्मी को अपनी कोख की सार्थकता का एहसास करवा दिया! उसके सारे अपराध बोध और सद्यः जन्मी संतान के प्रति अन्याय बोध खत्म हो

गया। खुशी का वह एक पल- वह भावभीना क्षण शम्मी की जिंदगी का सबसे दैवी पल बन गया- खुशी खुशी सौंप दी उसने वह अमानत उसके सच्चे हकदारों को- संजो लिया खुशी के उस एक पल को दिल की भीतरी तहों में।ण्और अब शांत थी वह उस सदानीरा की तरह जिसकी कोख में न जाने कितने भूकंप छिपे रहते हैं!

ढोंगी

कितनी ढोंगी थीं तुम। तुम्हारी वह हँसी, वे कहकहे, वो हर एक की मिमिक्री, दमसांके की तर्ज पर अनूठी एक्टिंग सब छलावा थी? भीतर से इतनी डरी सहमी रही हुई तुम बाहर इतनी अच्छी एक्टिंग कैसे कर लेतीं थीं.. या या शायद तुम्हारी सदा खुश रहने की, हर हाल में गतिशील, सबके साथ बँटती बाँटती खुशियों की खुशबू ही तुम्हारी दुश्मन बन गई।

कब से नफरत धधक रही होगी उसके दिल में दावानल की तरह.. कब कैसे इंतजाम किया होगा उसने एसिड का। कैसे ऊंडेला होगा उसने तुम पर वह जहर। हाथ नहीं काँपा होगा उसका, हृदय दहला नहीं होगा उसका यह कुकृत्य करते वक्त। उन्ही हाथों से उसने चरणस्पर्श किए होंगे तुम्हारे कई बार। अनेकों बार गले से लगाया होगा उसे तुमने। फिर इतनी बड़ी सजा क्यों दी उसने तुम्हें और फिर खुद ही सरेंडर भी कर दिया। क्या तुम्हारा सदा खुश रहने का ढोंग इतना नागावार था उसे? कौन देगा इन प्रश्नों के उत्तर? तुम तो अपने जले हुए चेहरे से डरकर वाणी ही खो चुकी हो और वह.. अमानवीय पैशाचिक चुप्पी साध ली है उसने तो। क्यों? कब? कहाँ? कबसे? अनुत्तरित हैं सारे प्रश्न.. कि इकलौती बहू और उसकी अति लोकप्रिय सास.. मनोचिकित्सकों के लिए भी गहन है.. अभेद्य है.. अनहोनी सा है सब कुछ---।।

शोषण

नहीं दीदीजी एक हजार से एक पैसा भी कम नहीं देना दीदी। भरोसा करो दीदी आपसे ज्यादा नहीं ले रहा हूँ सिर्फ सौ रुपए का मार्जिन है दीदीजी।

पिछले कई वर्षों से हमारी कालोनी में साड़ियां बेचने आने वाला वह बंगाली चिरौरी कर रहा था मगर हम तीनो देवरानी जेठानी ठिठोली करते हुए मजाक बनाते डेढ़ घंटें से उसे रोके हुए थीं--कभी ये गठ्ठा खुलवातीं कभी वो। मुश्किल से दो चार साड़ियां पसंद कीं। और खूब मोलभाव कटौती की।

छोटी सी गाड़ी पर चारों ओर से अनगिन गठ्ठे लटकाए जब वह चलता तो लोग दांतों तले उंगली दबा लेते। खूब ज्यादा साड़ियां बेच लेने की उसकी कोशिश का हम लोग खूब मजाक बनाते।

एक दिन एकाएक उसे चक्कर से आने लगे। हमने उसे चाय देने की कोशिश की तो उसने बताया कि उसे शुगर की बीमारी है- घर जाकर खाना खाएगा। सही समय पर खाना पीना न होने से उसकी बीमारी बढ़ जाती है। उसने अपना पैर दिखाया जहां छोटा सा घाव उसे परेशान करता था।

उसकी व्यथा ने हमें भीतर तक शर्मिंदा कर दिया। बड़े बड़े माल्स में मुंहमांगी कीमत पर हम वस्तुएं खरीद लेते हैं। मगर उस मजबूर फेरीवाले की- जीवन की उसकी परेशानियों को न समझते हुए घंटों तक बार्गेनिंग करते हुए हम सफेदपोश कहलाने वाले लोग शोषण ही तो करते रहते हैं ये बात भीतर तक लगी और आगे से कभी भी गरीब मजबूरों के साथ ऐसा न करने के वायदे अपने आप से किए। सच कहें तो फेरीवाले की इस लघुकथा ने जीवन के सच्चे रंगों से रूबरू कराया।

कल आज और कल

मीता मीता-- बहू कहां है बेटा बहुत देर हो गई है। खाना दे दो। मुझे चक्कर से आने लगे हैं भूख के कारण।

फोन पर अपनी मम्मी से बतियाती मीता को सास की पुकार बड़ी नागावार गुजरी। फोन पर ही अपनी माँ से बोली देखा मां कैसी चीख पुकार मचा रही है बुढ़िया- जैसे खाना ना मिला तो मर ही जाएगी। सच कहूं मम्मी मैं तो तंग आ गई हूँ इस घर से और इस घर के लोगों से- इन बुड्ढा बुड्ढी से।

बड़ी दीदी को देखो जीजाजी और उनके मां पिताजी उंगलियों पर नाचते हैं दीदी के।

और दूसरे ही क्षण अनुभवी दुनियादार मम्मी ने दे दिया मूल मंत्र छोटी बिटिया को भी- सास ससुर और पति को उंगलियों पर नचाने का।

कुछ ही दिनों में पडोसियों ने देखा कि मीता महारानी सी झूले पर बैठी सहेलियों के साथ किटी में व्यस्त है और सास ससुर और सुधीर भीगी बिल्ली बने हुए दांत निपोरते हुए मीता और उसकी सहेलियों के चोंचले उठा रहे हैं। वाह मीता कितना प्यार करते हैं तुझे सब लोग।

सुधीर और उसके माता-पिता चुपचाप हैं क्योंकि मीता ने साफ कह दिया है कि यदि घर उसकी मर्जी से ना चला तो वह पूरे परिवार के विरुद्ध दहेज प्रताड़ना की रिपोर्ट लिखवा देगी- जेल करवा देगी सबको

और उसी दिन से गायत्री सोचे जा रहीं हैं कि क्या वे भी कभी बहू थीं? क्या वे भी कभी बहू थीं ससुराल में अपनी बहू की तरह?

बेटी बचाओ बेटी पढ़ाओ

पापा पापा मां ने छोटी गुड़िया को अभी तक दूध नहीं पिलाया। रो रही थीं बस।

मंझली बेटी की बात सुनकर बिष्णुप्रसाद उठ कर पत्नी के पास चल दिए। उन्हें देखकर मंजुला ने आंसु पोंछ लिए और बोली माफ कर दीजिए जी- तीसरी बार भी मैं आपको बेटा नहीं दे पाई। आपके वंश का चिराग नहीं दे पाई

क्या मालूम ऐसा कैसे हो सकता है जी-- मुझे तो डॉक्टर ने कहा था कि मेरे गर्भ में बेटा पल रहा है। पर अब यह तीसरी भी आ गई छाती पर मूंग दलने।

मंजुला की बातें सुनकर बिष्णुप्रसाद मंद मंद मुस्कुराते रहे फिर बोले अरे पगली मेरे लिए बेटा और बेटी में कोई फर्क नहीं है। मैं तुम्हारे मन को समझ रहा था- अपनी दुविधा के चलते तुम कोई गलत कदम ना उठालो इसलिए मैंने ही डॉ से कहा था कि तुम्हें बेटा ही बताए।

चलो कोई बात नहीं हम इस तृतीया को अनाथालय में दे देते हैं या किसी को गोद देते हैं।

बिष्णुप्रसाद की बात सुनकर मंजुला ने आंख भरकर तृतीया की ओर देखा। गोल चांद सी दमकती गुलगोथनी आंखें मूदें सपनों की दुनिया में मुस्करा रही थी।

बोल उठी नहीं जी अब आ ही गई है तो पल भी जाएगी जी। किसी को क्यों दें। और बिष्णुप्रसाद मन ही मन धन्यवाद करने लगे उस क्षण का जब 'बेटी बचाओ बेटी पढाओ' अभियान के एक विज्ञापन से प्रेरित होकर उन्होंने मंजुला से झूठ बोलने का विचार बना लिया था और डॉ से भी कहलवा दिया था- बिना किसी जांच के ही। उन्होंने देखा कि मंजुला तृतीया को अपने अंक में भरकर

अपने आप में मगन सी बोले जा रही थी- मेरी गुड़िया मेरी लाडो- तुझे खूब पढाउंगी खूब विद्या दूंगी- तुझे मैं अपने देश की बड़ी अच्छी नागरिक बनाऊंगी-

और बिष्णुप्रसाद भी खुशबू और खुशी का हाथ थामे चल दिए उन्हें विद्यालय पहुंचाने जहाँ बड़े बड़े अक्षरों में लिखा था 'बेटी बचाओ बेटी पढ़ाओ'-।।

गोल्ड मेडल

मां ओ मां.. मां.. मेरा गोल्ड मेडल कहां है। यहीं तो रखा रहता था अलमारी में। दिख नहीं रहा है। तुमने उठाया है क्या?

डेढ़ कमरे के उस छोटे से घर में गायत्री मधुर की आवाज को सुनी अनसुनी करती हुई चुप रही। दाल की तरह दिल भी उबल रहा था मगर कलछुल चलाती किसी तरह दिल को थामे गायत्री काम करती रही।

थकहार कर मधुर मां के पास पहुंचकर बैठ गया।

इतने में किराणा परचून की दुकान वाला लाला धड़धडाता हुआ घर में घुस आया.. उसने हाथ में लिया गोल्ड मेडल गायत्री के सामने दे मारा बड़बड़ाते हुए.. निकालो निकालो मेरे पैसे। बड़ी आई सौदा लाने वाली.. अरे मेरी अनपढ़ बीबी के हाथ में थमा दिया यह दो रुपल्ली का मेडल.. सोने का मुलम्मा चढ़ा लोहे का ठीकरा और ले आई अढ़ाई सौ रुपये का सामान। निकालो निकालो मेरे पैसे.. लो रखो अपना पीतल का ठीकरा।

मधुर ने दौड़कर गोल्डमेडल उठा लिया। लेकिन दिमाग में द्वन्द्व मचा हुआ था। विद्यालय में उसके गले में यह गोल्ड मेडल पहनाते हुए प्रमुख अतिथि ने जो शब्द कहे थे वे सच थे.. या यह सच है जो अभी अभी लाला कह कर गया है..?

गूंगी ममता

भरी पंचायत में जसोदा को छोर छुट्टी दे कर गंगू ने गुनिया से ब्याह रचा लिया। बांझ का तमगा पहले ही गले में लटका था-- अब छोडी हुई औरत भी।

कुछ समय बाद गुनिया के बढते उदर आकार में गंगू की दुनिया पसरने लगी। ज्यों ज्यों प्रसव काल नजदीक आता गया जसोदा के मन में नारी सुलभ ईर्ष्या बढती गई। जी करता कलमुंही मुंह झौसी को उठा के पटक दे, खूब तमाचे लगाये। दो चार बार उसे हानि पहुँचाने की कोशिश भी की और खूब मार खाई।एक बार तो कुंए में बस ढकेलने ही वाली थी तो गंगू ने पीछे खींच कर खूब कुटाई की।

रात को एकाएक नींद टूट गई दर्दभरी कराहों से। झोपड़ी के परले हिस्से से वो पुकार रही थी- ए दिदिया दरद उठ रहो है। तनि दाई को बुला देव री दिदिया। देख मेरा बालक तो तेरा ही होयगो। अरी तू तो जसोदा है री दिद्दो- भादों की हहराती रात में दाई कहां पाए भला- और वह गूंगी ममता एक क्षण में जसोदा बन गई। कलमुंही मुंहझौसी को हल्दी सोंठ गुड़ का काढ़ा हरीरा पिलाकर प्यार से ओढा-तोपा कर सुला दिया और कन्हैया को साफ करके शहद चटा कर डिठौना लगाकर नंद बाबा का इंतजार करने लगी- गूंगी ममता..!

पतित-पावनी गंगा

नुक्कड़ पर बैठे अनाथ जूता पॉलिश करने वाले बालक से एक महाशय ने पूछा लड़के हमारे साथ हिमाचल दर्शन को चलोगे बालक बोला 'ना बाबू ना- उस ऊंचे पहाड़ से मुझे क्या लेना देना। अपना तो देश समाज, माँ बाप सभी कुछ यह नुक्कड़ ही है। इस नुक्कड़ का यह ढाबेवाला जो एक-एक पैसे के लिए ग्राहकों से हुज्जत करता है यह मेरा अन्नदाता है- और नुक्कड़ की यह साफ-सफाई करने वाली मन्ना न जाने कहां से फटे पुराने कपड़े लाकर मेरा तन ढांकती रही है। उसका बस चले तो वह नुक्कड़ के सारे आवारा कुत्तों को भी अपने चिथडों से ढंक लेगी।'

महाशय बोले अरे लड़के वहां पतित पावनी गंगा सब के पाप धो देती है। इस पर लड़के ने कहा साहब लोग कहते हैं कि धनिया अपने लंगड़े बच्चे का पेट भरने के लिए और बीमार आदमी की दवाई के लिए पाप करती है- साहब गंगा से कहना कि वह धनिया के पाप धोने यहां आ जाए। क्योंकि धनिया बिचारी तो वहां नहीं जा पाएगी। वह जाएगी तो उसका लंगड़ा बेटा भूख से तड़पेगा और उसका बीमार पति बिना दवा के मर जाएगा। गंगा को नुक्कड़ पर ले आओ साहब। बेचारी धनिया बहुत दुखी है साहब- और महाशय सोचते रहे कि गंगा अधिक पतित पावनी है या धनिया अधिक पापिन है। हिमालय अधिक ऊंचा है या नुक्कड़ वासी।

किसका सच?

ना जाने क्या हो गया है छोटे को आजकल । कभी कभी अपने आप में गुम सिर्फ पत्नी से बात करेगा और निकल लेगा। कभी अजीब सी वीरान निगाह से बहन को निहारेगा

ससुराल वासी बडी बहन जो एक पारिवारिक फंक्शन में शामिल होने के लिए मायके आई थी- अपने आप को बड़ी उपेक्षित और अपमानित महसूस कर रही थी मगर बात की तह तक नहीं पहुंच पा रही थी।

शाम को माँ बाबूजी के साथ बैठकर हँसती बतियाती सुधा एकाएक चौंक गई छोटू के शब्दों से- पत्नी से कह रहा था पूछ लो बहनजी से घर का कौनसा हिस्सा उनके नाम लिखवाना है। नहीं तो अपनी कहानी की पात्र कामिनी की तरह हंगामे मचा देंगी पिता की प्रापर्टी में हिस्सा लेने के लिए।

मानों साँप सूंघ गया उस खिलखिलाती संध्या में सब को और सोचती रह गयी सुधा- कि मायके के लिए शुभाकांक्षा जिसकी रग रग में बसी है, भाई की सुखी गृहस्थी के लिए पल पल प्रभु से दुआएं मांगती है- मगर नारी के हक में बोलने वाली, नारीवादी विचारों की रचनाकार सुधा क्या सचमुच भीतर से इतनी स्वार्थी है? रचनाकार के सृजन को क्यों उसके जीवन की सच्चाई मान लिया जाता है- साहित्य तो समष्टि के कल्याण के लिए किया गया सृजन होता है उसे क्यों व्यष्टि के लिए अनिवार्य सच मान लिया जाता है। आखिर क्यों? कब तक?

पिंजरा

उठो रवि की मां कब तक यों दुःखी होती रहोगी। सामान बांधना है शिफ्ट करना है-।

हां हां रवि के पापा। मुक्त हो गए हम भी आज इस मोहमाया के पिंजरे से। रवि दिल्ली से उड़ान भरेगा विदेश की ओर- और यहाँ हम भी छोड जाएंगे अपना यह नीड़- जिसे तुम दोनों बाप बेटे हमेशा पिंजरा कहते रहे।

हां रवि की मां महाजन के आदमी आते ही होंगे ताला लगाने। चिड़िया के बच्चे भी बड़े होते ही पंख पसारे उड़ जाते हैं। फिर इंसान के बच्चों को कब तक बांध पाओगी तुम।

बिशन लाल की बातें सुनकर पार्वती आंसू पोंछते हुए बोली- बात बांधने की नहीं है जी। जानती हूँ मैं कि ममता के पिंजरे में बच्चों को बांधे रखना बड़ा कठिन है। छोटा पड़ जाता है ममता का आंचल। लेकिन बच्चों को भी सोचना चाहिए ना--अरे पालतू पखेरू भी उड जाते हैं आसमान नापने पर पिंजरा लेकर तो नहीं उडते ना। पर हमारा बच्चा तो हमारा यह छोटा सा घरौंदा- हमारा पिंजरा- इस उम्र में हमारा एक मात्र सहारा भी लेकर उड़ गया ना रवि के पापा।

हां- शायद तुम ठीक ही कह रही हो रवि की मां। अमेरिका की टिकट वीजा पासपोर्ट के चक्कर में यह छत भी बिक गई। पिंजरा छोड़ कर कल से वह उड़ेगा खुले आसमान में और हम जमीन पर आ जाएंगे। हम इंसान हैं इसलिए तो हमारा पिंजरा भी हमारा नहीं रहा।- और पार्वती बड़ी हसरत से टुकुर टुकुर ताकती रह गई अपने मायावी पिंजरे को जो कल से उनका नहीं रहेगा क्योंकि वे पाखी नहीं हैं वे कपोत कपोती नहीं हैं।

रूह का सफर

माँजी मैं जा रही हूँ। दरवाजा बंद कर दो।

कहते कहते डॉ नीता घर से निकल कर तेज तेज चलती हुई बाहर आँगन में खड़ी कार में बैठ गई और कार को रोड पर लाने के लिए सेट करने लगी। रिवर्स लेने की प्रक्रिया में पीछे से माँ- मम्मी- एक मार्मिक चीख और फिर गहरा सन्नाटा। दहल गया डॉ नीता का हृदय। गाड़ी को एक अजीब सा झटका लगा पिछले पहिए में और घबराकर डॉ नीता ने गाड़ी रोक दी।

गाड़ी रुकने की कर्कश आवाज सुनकर पति और सासु माँ भी घबरा कर बाहर निकल आए और दोनों के मुंह से मर्म भेदी चीखें निकलने लगीं।

उन दर्दनाक चीखों को सुनने के बाद गाडी बंद करके नीचे उतरकर कार के पीछे तक पहुंचने के उस एक पल में डॉ नीता के लिए ब्रम्हांड की गति रुक गयी मानो और पिछले पहिए का रक्तरंजित दृश्य देखकर दूसरे ही पल वह बेसुध धरती पर गिर पड़ी।

माँ के पीछे पीछे चुपचाप ना जाने कैसे बाहर आ गई तीन वर्षीय बिटिया का क्षतविक्षत शरीर पिछले पहिए में फंसा तड़प रहा था और यहां तडप रही थी डॉ नीता की रूह उस नन्ही सी रूह तक पहुंचने के लिए। लेकिन प्राणों की गति हार गई मौत की गति के सामने और बच्ची तक पहुंच कर उसे अपनी ममता के आँचल में छुपा कर यमराज से छीन लेने की कोशिशों में हार गई नीता। एक डाक्टर मां के सामने उसकी बच्ची के प्राण पखेरू उड़ गये और रूह से रूह तक का सफर अधूरा रह गया।

पागल सी हो गई नीता। विदेह सी दिनभर ना जाने किससे बातें करती रहती। उसकी रूह तन मन की परिधि से परे अपनी

नन्ही रूही की रूह तक का सफर करती रहती है और माफी मांगती रहती है उससे अपनी अनजानी लापरवाही के लिए। मनःचिकित्सालय के डाक्टर थक गए हैं उसे अपनी दुनिया में वापस लाने के प्रयास कर कर के शायद उसकी रूह की मुक्ति के साथ ही पूरा होगा उस बेकसूर अपराधी ममता का अंतहीन रूहानी सफर।।

रिटायरमेंट

पापाजी कहाँ हैं आप। जल्दी दूध लाइए गुड़िया उठ जाएगी और दूध नहीं मिलेगा तो आसमान सिर पर उठा लेगी।

आया बेटा। जरा रॉकी के साथ खेल रहा था।।

अच्छा ड्यूटी जाना होता था तो आठ बजे से महाराज सूटबूट पहनकर लकदक तैयार हो जाते। मगर अब देखिए किसी जिम्मेदारी का कोई एहसास ही नहीं। आठ बजे तक घूम रहे हैं बिना नहाए धोए।

पत्नी के ताने को भुला कर जल्दी से दूध लाकर बहू को दिया। और नहाने के लिए बाथरूम में चल दिए।

इतने में हडबडाते हुए बड़े सुपुत्र दौड़ते से आए और बाथरूम का दरवाजा खटखटाने लगे। भीतर से पापाजी की आवाज सुनकर उनका पारा हाई हो गया। ये क्या पापा। आप को क्या पड़ी है इतने जल्दी तैयार होने की। कौनसा आपको ड्यूटी जाना है। दस बजे के बाद भी तैयार हो सकते हैं।

और केदारनाथ सोचते रह गए कि हाँ अब वे रिटायर्ड हो गए हैं।

उसकी ईदी

आज की ईद असलम के लिए सचमुच बड़ी मुबारक है। आज ईदी के रूप में उसे भारतीय वायुसेना के शिक्षा निदेशालय की एक यूनिट में एल ए सी के पद पर नियुक्ति और ट्रेनिंग पर जाने का आदेश मिला है। आखिरकार उसने साबित कर दिया कि वो एक सच्चा हिन्दुस्तानी है। बचपन से ही उसे सेना में नौकरी करने का जुनून की हद तक शौक था। बार्डर से कुछ ही दूर सेना कैंप के पास की बस्ती में असलम के पिता की हार्डवेयर की शाप थी। छोटी सी कील से लेकर घर की लौह अलमारी तक वे मंगवा देते थे इसी बिजनेस के चलते उनके अच्छे व्यापारिक संबंध थे! 'हर मुसलमान आतंकवादी नहीं होता साहब' यह उनका तकिया कलाम था- और आज असलम की वायुसेना में नियुक्ति ने उनकी ईद यादगार बना दी थी।

पिछले दिनों होली के दौरान असलम ने अपनी जान पर खेलकर स्कूली बच्चों की एक बस को आतंकवादियों के चंगुल से छुड़ाया था! उसके सीवी बायोडाटा में ऐसे अनेक प्रसंग शामिल थे और आज ईद की दुआएँ उसके लिए देशसेवा का पैगाम लाई थीं। परंतु किस्मत को तो कुछ और ही मंजूर था। कुछ असामाजिक तत्वों ने शाम को मंदिर मस्जिद में सुअर और गाय का मांस फेंक कर दंगों को न्यौता दे दिया था। अपनी सरकारी ईदी बाल सखा मोहन को दिखाने पहुंचा असलम दंगाईयों के बीच घिर गया । मोहन पर पड़ने वाला वार असलम ने खुद पर झेल लिया- अल्लाह ने उसे सबाब का वाली बना दिया और हाथ में- ईद का तोहफा रक्षामंत्रालय का नियुक्ति पत्र सिग्नल उसके हाथों में फड़फड़ाता रहा- फड़फडाती ही रह गयी उसकी चिरसंचित तमन्ना- उसकी ईदी सेना में नौकरी की।

आज का कान्हा

चल भाग बड़ा आया मेरे बेड पर मेरे साथ सोने। जा अपनी दादी के साथ सो।

माँ की झिड़की से सहम गया शिवम। मगर ढीठ बना वहीं खड़ा रहा। आहत स्वाभिमान आँखों की राह बह निकला परंतु आँखों में आशा की ज्योत जलती रही। भले ही उसकी माँ उसे जन्म देते ही गुजर गई हो मगर कल कन्हैया के बारे में कहानी सुनाते वक्त दादी ने कहा था कि यशोदा मैया भी कान्हा की सगी माँ नहीं थी। वे भी तो उन्हें ऊखल से बांध दिया करती थी। माखन मिश्री खाने से रोकती थी।

फिर भी तो कान्हा उन्हीं के बेटे कहलाते हैं- यशोदानंदन ही कहते हैं कान्हा को। फिर संध्या माँ भी तो मेरी यशोदा मैया हैं। सोचते सोचते आज का वह नन्हा कान्हा वहीं माँ के बेड पर सिकुड़ कर एक कोने में सो गया- माँ के सपनों में खो गया।

रिश्तों की सडांध

आप क्यों मेरे-तुम्हारे, इसके-उसके संबंधों को लेकर परेशान रहते हैं। अरे ये दुनिया रिश्तों की रवानी में बसती है रिश्तों को ढोने की सडाँध में नहीं। कहते हुए पर्स हिलाती रमीला बाहर निकल गई और अपने दोस्त रितिक की गाड़ी में बैठ कर ये जा वो जा। - - रमीला की ऐसी ही दलीलों से परेशान हो कर सतीश अपने माता-पिता के पास पुराने घर में शिफ्ट हो गया-- रिश्तों की रवानी में रम गया। बैंक बैलेंस खत्म होने के साथ ही रमीला के दोस्तों की रवानी भी थम गई मगर तब तक बहुत देर हो चुकी थी। रिश्तों की रवानी का रुख बदल चुका था और रमीला के हाथों में शेष थी ठुकराए रिश्तों की सडाँध मात्र।।

प्रसव पीड़ा

क्या ये खटराग लिए बैठी रहती हो। आज इस उपन्यास का संपादन करना है- कल उस पुस्तक का। आज यह कहानी संग्रह प्रकाशित करना है- कल उस पुस्तक का अनुवाद करना है। भई बंद करो ये सब।मेरे घर में ये सब और नहीं चलेगा।

रमन की बात सुनकर रमा अभी संभल भी नहीं पाई थी कि बेटे की टिप्पणी से दहल गई- बेटा कह रहा था 'हाँ ठीक ही तो कह रहे हैं पप्पा। शांति से जीवन बिताइए ना पिया राहुल के साथ। क्या धरा है इस लेखन वेखन में।'

कोख की अकुलाहट चेहरे पर पीड़ा बन उभर आई। इतना दर्द तो पुलक और पुनीत के जन्म की प्रसव पीड़ा में भी नहीं हुआ था, आज शब्दों की शमशीर सीधे दिल पर वार कर गई।

ये घर रमण का है इसमें मेरा कोई दाय नहीं। पुलक के बच्चों राहुल और पिया के साथ ही खुश रहना है बस- और जीवन के खत्म होने का इंतजार..!

रमा का हाथ अनायास जूडे में अटकी लेखनी पर चला गया। निश्चय दृढ़ हो गया। दो प्रसव पीड़ा सहकर परिवार नाम का जो दुनियावी साम्राज्य खड़ा किया था, वह उसके मालिकों को मुबारक। रमण, पुलक, पुनीत को मुबारक।

रचना संसार में भी तो रमा ने प्रसव पीड़ा का गहरा आव्हान स्वीकार कर रचनाओं में प्राण फूंके हैं। तो फिर आगे भी क्यों नहीं?

फिर से रचनाओं को जन्म देगी- अकेली। हार नहीं मानेगी रमा- वह लड़ेगी- अंत तक! अपनी रचना धर्मिता के लिए कोई अनर्गल शब्द नहीं सुनेगी। रचना संसार की प्रसव पीड़ा को अकेली झेलेगी।

धीरे-धीरे रमा के कदम बढ चले कॉलेज होस्टल वार्डन के लिए बने उस कक्ष की ओर जो न जाने कब से उसका इंतजार कर रहा है।।

दुकान जलने की खुशी

जीजाजी फैक्ट्री का ८०%माल चुपचाप उठवा लिया है.. अच्छी मशीनों को पहले ही अच्छी जगह पहुंचा दिया है और कंडम मशीनों को फैक्ट्री में ही रख छोड़ा है और जीजाजी मूछों में ही मुस्काने लगे। दूसरे दिन दुकान में आग की खबरें मीडिया दिन भर सुनाता रहा भारी नुकसान की बातें आम जनता को दहलाती रही। मनसुखभाई अपने साले और इंश्योरेंस विभाग के साथियों के साथ शराब और शबाब की सरिता में तैरते रहे दुकान जलने की खुशी में। उस रात २५ घरों में चूल्हा नहीं जला।

सूखी स्याही

कई दिनों से सोच रही थी रमा- आज लिख कर ही रहूंगी। प्रकाशक जी फोन कर करके परेशान हो गए आखिर चुप हो गए। लेकिन लिखना तो पड़ेगा ही। बरसों की मेहनत ने पहचान के इस मकाम पर पहुंचाया है और आज कुछ दिनों की दूरी ने अजनबीपन की अदृश्य रेखा खींच दी है फैंस और उसके बीच।

कमेंट और लाईक करने वालों की संख्या लगातार कम हो रही है। अतिथि, अध्यक्ष, निर्णायक, वक्ता और संचालन हेतु आमंत्रण की निरंतरता भी प्रभावित हो रही है।

रमा के भीतर बहती संवेदनाओं की दुनियावी सदानीरा सूख गई और फेसबुक वाट्सएप पर लेखन की बनावटी दुनिया की सूखी स्याही बह निकली! माँ पत्नी बहू भाभी वाली भावुकता सो गई और रमा- कमेंट्स लाईक्स के स्निग्ध जवाब लिखने लग पड़ी दिल की सूखी स्याही से।।

व्यक्तित्व दर्पण

नाम - **हेमलता मिश्र 'मानवी'** वरिष्ठ साहित्यकार नागपुर

जन्म - ८/८/१९५५, पुलगांव जिला वर्धा महाराष्ट्र

पिता - श्री मोहनलाल जी शुक्ल

पति - श्री विजयकुमार मिश्र

शिक्षा - एम.ए.(हिन्दी साहित्य) बी.एड., पी.एच.डी.

कार्य - भारतीय वायुसेना की कार्यालयीन गृह पत्रिका किरण की २५ वर्षों तक एकमेव संपादक तथा प्रकाशन से वितरण तक संपूर्ण दायित्व वाहक भूमिका।

प्रकाशन - 'और शिला मानवी नहीं बनी', 'गगन कब बनोगे धरा', 'फागुन रंग कितने'
निबंध कविता कहानी नाटक हाईकु सेदोका विभिन्न विधाओं के २५ से अधिक संकलनों में स्तरीय गणना में रचनाओं का प्रकाशन।

पुरस्कार एवं सम्मान -

गृह पत्रिका किरण की संपादक के नाते गृहमंत्रालय एवं रक्षा मंत्रालय के अनेकानेक हिन्दी प्रचार प्रसार पुरस्कारों एवं उत्कृष्ट संपादन पुरस्कारों से पुरस्कृत। महाराष्ट्र हिन्दी साहित्य अकादमी से प्रकाशन अनुदान से सम्मानित, विदर्भ हिन्दी साहित्य सम्मेलन में हिन्दी सेवी पुरस्कार, हिन्दी महिला समिति से हिन्दी सेवी पुरस्कार, सुप्रतिष्ठित अखिल भारतीय अग्नि शिखा मंच की विदर्भ प्रभारी व अध्यक्ष। सामाजिक साहित्यिक सांस्कृतिक संस्था रचना की उपाध्यक्ष तथा अनेक संस्थाओं की पदाधिकारी।

देशभर में संगोष्ठियों में आमंत्रित एवं पेपर वाचन, हाल ही में रामेश्वर दयाल दुबे साहित्य पुरस्कार एवं कमलेश्वर साहित्य सम्मान से सम्मानित, अखिल भारतीय स्तर की पत्र पत्रिकाओं में सतत प्रकाशित।

तीन मेडिसिन डाक्टरों की पुस्तकों का अनुवाद। उत्कृष्ट संपादन हेतु केन्द्रीय मंत्री नितीन जी गडकरी से सम्मानित। अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय वर्धा के तथा छत्तीसगढ़ शताब्दी वर्ष के तीन तीन दिवसीय सम्मेलन में सादर आमंत्रित व पेपर वाचन और सक्रिय सहभागिता। आकाशवाणी दूरदर्शन पर नाटक कहानी कविताएं सतत प्रसारित। हाल ही में दोहा वाचन में वर्ल्ड बुक ऑफ रेकॉर्ड यूके में उद्घृत।

पं.क्र. (04/21/05/207665/19)
अन्तरा शब्दशक्ति
www.antrashabdshakti.com
१५, नेहरु चौक, मेन रोड वारासिवनी, जि. बालाघाट (म.प्र.) पिन ४८१३३१,
संपर्क- ९४२४७६५२५९, अणुडाक: antrashabdshakti@gmail.com
978-93-5372-075-9
मूल्य 60/-
शब्द सुगंध